بِسۡمِ اللّٰہِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ نَحۡمَدُہٗ وَ نُصَلِّیۡ عَلٰی رَسُوۡلِہِ الۡکَرِیۡمِ وَعَلٰی عَبۡدِہِ الۡمَسِیۡحِ الۡمَوۡعُوۡد
لَآ اِلٰہَ اِلَّا اللّٰہُ مُحَمَّدٌ رَّسُوۡلُ اللّٰہِ
دفتر مجلس انصاراللہ بھارت
Office Of The Majlis Ansarullah Bharat
Mohallah Ahmadiyya Qadian-143516, Distt.Gurdaspur (Punjab) INDIA

सारांश ख़ुत्ब: जुमः सय्यदना अमीरुल मोमिनीन हज़रत मिर्ज़ा मसरूर अहमद ख़लीफ़तुल मसीह अलख़ामिस अय्यदहुल्लाहु तआला बिनस्रिहिल अज़ीज़
बयान फ़र्मूदा 26 जून, 2026, स्थान मस्जिद मुबारक, इस्लामाबाद,यू.के.
(अहसान महीने की तिथि 26 ,1405 हश)

आँहज़रत ﷺ के सच्चे प्रेमी हज़रत मसीह मौऊद अलैहिस्सलाम की ग़रीब परवरी और जूदो सख़ा (दानशीलता) का ईमान वर्धक वर्णन।

Mob: 9682536974 E.mail. ansarullah@qadian.in Khulasa khutba- 26.06.2026
محلہ احمدیہ قادیان-پنجاب-143516

أَشْهَدُ أَنْ لا إِلَـهَ إِلَّا اللهُ وَحْدَهُ لَا شَرِيْكَ لَهُ وَأَشْهَدُ أَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهُ وَرَسُولُهُ
امّا بعد فاعوذ باللہ من الشیطٰن الرجیم۔بِسْمِ اللهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيم
اَلْحَمْدُ لِلهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ۔ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ ۔ مَالِكِ يَوْمِ الدِّينِ ۔ إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَ إِيَّاكَ نَسْتَعِينُ ۔ اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيمَ ۔ صِرَاطَ الَّذِينَ أَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ غَيْرِ الْمَغْضُوبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّآلِّينَ۔

तशहुद, तअव्वुज़, सूरः फ़ातिहा, की तिलावत के बाद हुज़ूरे अनवर अय्यदहुल्लाहु तआला बिनस्रिहिल् अज़ीज़ ने फ़रमाया: अल्लाह तआला के इर्शाद और आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के उस्वा (आदर्श) पर चलते हुए हज़रत मसीह मौऊद अलैहिस्सलातु वस्सलाम के जीवन में हमें ग़रीब परवरी (ग़रीबों की देखरेख) और जूदो-सख़ा (दान-पुण्य और उदारता) की बहुत सी घटनाएं मिलती हैं। यह केवल आपके (मसीह होने के) दावे के समय से ही नहीं, बल्कि आपके जीवन के शुरुआती हिस्से और जवानी की उम्र में भी हमें आपके उच्च अख़्लाक़ (श्रेष्ठ चरित्र) के वाक़्यात मिलते हैं।

अल्लाह तआला ने आप अलै. की जिस मां की गोद में परवरिश फ़रमाई, उनके जीवन को भी हम देखते हैं तो वहां भी हमें ग़रीब परवरी और जूदो-सख़ा के वाक़्यात मिलते हैं, मानो आपने एक ऐसी मां की गोद में परवरिश पाई जिन्होंने आपको उच्च संस्कार और नैतिकता भी सिखाई। हज़रत शेख याक़ूब अली इर्फ़ानी साहब रज़ी. लिखते हैं कि हज़रत माई चिराग़ साहिबा यानी वालिदा माजिदा (आदरणीय माता जी) हज़रत अक़्दस अलैहिस्सलाम का ख़ानदान मौज़ा (गांव) आइमा, ज़िला होशियारपुर में एक प्रतिष्ठित और सही मुग़ल ख़ानदान था। आपके स्वभाव में सख़ावत और मेहमाननवाज़ी कूट-कूट कर भरी हुई थी। एक पवित्र और सती महिला में जो उच्च गुण होने चाहिए, वे आप में मौजूद थे। वह हमेशा प्रसन्नचित्त और गंभीर अवस्था में रहती थीं। मेहमाननवाज़ी के लिए उनके

दिल में बेहद जोश और सीने में विशालता थी। अगर उन्हें सूचना मिलती कि चार लोगों के लिए खाना भेजें, तो जब खाना जाता तो वह आठ से भी अधिक लोगों के लिए होता था। अपने शहर के ग़रीबों और कमज़ोरों का वह विशेष रूप से ध्यान रखती थीं और उनकी दिनचर्या में एक ख़ास बात यह थी कि ग़रीबों के मृतकों को कफ़न उन्हीं के घर से मिलता था।

हज़रत मियां अल्लाह यार साहब रज़ी. बयान करते हैं कि जिस समय हुज़ूर अलै. सियालकोट में नौकरी करते थे, एक बार हुज़ूर के लिए हुज़ूर की माता जी ने दो पोशाकें यानी कपड़े और कुछ पिन्नियां (एक प्रकार की मिठाई) एक व्यक्ति मंगल नामक हज्जाम के हाथ भेजीं। (वह कहता है) जब मैं ये चीज़ें लेकर सियालकोट गया और हुज़ूर के आगे रख दीं, तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया: "जो तुम्हारे हिस्से में आता है तुम ले लो और जो मेरा हिस्सा है वह मुझे दे दो।" मैंने कहा कि हुज़ूर! ये आपके लिए हैं, माता जी ने आपके लिए भेजी हैं। फ़रमाया कि तुम सारी चीज़ें इतनी दूर से उठाकर लाए हो, तो अपना आधा हिस्सा ज़रूर ले लो। ख़ैर, मुझे एक पोशाक और कुछ पिन्नियां दे दीं और फ़रमाया कि अम्मा जान से जाकर कहना कि मुझे यहां से जल्दी वापस बुला लें, मेरा दिल यहां नहीं लगता।

हज़रत मिर्ज़ा बशीर अहमद साहब रज़ी. एक रिवायत (कथन) बयान करते हैं कि हज़रत साहब अलै. सियालकोट में रहते थे, वे घर में किसी से (फालतू) नहीं मिलते थे और जो तनख़्वाह मिर्ज़ा साहब को मिलती थी, वह उसे ज़रूरतमंदों में बांट देते थे; कपड़े बनवा देते या नक़द दे देते और अपने लिए सिर्फ़ खाने का ख़र्च रख लेते थे।

शुरुआती ज़माने में चूंकि आप एकांतप्रिय रहते थे और यही आपका रोह्जान था, इसलिए इस प्रकार के उच्च चरित्र का प्रदर्शन बहुत गुप्त रूप से होता था। लेकिन जब ख़ुदा तआला ने आपको लोगों के सामने निकाला और लोगों का आना बहुत अधिक बढ़ गया और आप अलै. के हालात की चर्चा होने लगी, तो इन घटनाओं को देखने वाले और बयान करने वाले भी पैदा हो गए। आप किसी मांगने वाले को कभी ख़ाली हाथ नहीं लौटाते थे।

हज़रत मौलाना अब्दुल करीम साहब रज़ी. फ़रमाते हैं कि एक दिन ऐसा हुआ कि अस्र की नमाज़ के बाद आप उठे और मस्जिद की खिड़की से अंदर जाने के लिए पैर रखा। इतने में एक मांगने वाले ने धीरे से कहा कि मैं सवाली हूं। हज़रत (अलैहिस्सलाम) को उस समय कोई ज़रूरी काम भी था और कुछ उसकी आवाज़ दूसरे लोगों की आवाज़ों में मिल-जुल गई थी। आप अंदर चले गए, तो उसी धीमी आवाज़ ने आपके दिल पर गहरा असर किया। आपने ख़लीफ़ा नूरुद्दीन साहब रज़ी. को आवाज़ दी कि एक सवाली था, उसे देखो। मगर वह ढूंढने से नहीं मिला। शाम को नमाज़ के बाद आप दोबारा बैठे, तो वही सवाली फिर आ गया और अपनी बात रखी। हज़रत अलैहिस्सलाम ने बहुत जल्दी से जेब से कुछ निकाला और उसके हाथ में रख दिया। अब ऐसा लगा कि आप इतने ख़ुश हुए हैं कि मानो कोई बड़ा बोझ आपके ऊपर से उतर गया हो।

क़ादियान से छह मील की दूरी पर 'सठियाली' एक छोटा सा गांव है। वहां से एक जट्ट फ़क़ीर आया करता था। वह मस्जिद-ए-मुबारक की छत के नीचे आकर खिड़की के पास आवाज़ लगाया करता था: "ग़ुलाम अहमद! एक रुपया लेना है।" और वहां बैठ जाता था। अगर हज़रत साहब व्यस्त होते, तो वह हर थोड़ी देर बाद आवाज़ें लगाता। अक्सर लोगों को यह बुरा लगता था। अगर हज़रत

अक़्दस को मालूम हो जाता कि किसी ने उससे कुछ (बुरा) कहा है, तो आप उसे नापसंद फ़रमाते और हंसते हुए उसे रुपया दे दिया करते थे।

सन् 1905 में हुज़ूर आख़िरी बार दिल्ली तशरीफ़ ले गए। एक दिन आप दिल्ली की मज़ारो (दरगाहों) आदि पर जाने के इरादे से निकले। किसी ने कहा कि हुज़ूर! इस तरफ़ रास्ते में इस क़दर भिखारी होते हैं कि गुज़रना मुश्किल हो जाता है। आपने फ़रमाया: "आज हम चलते हैं, हम सबको देंगे।" उस दिन उतने सवाली तो नहीं मिले जितना सुना गया था, फिर भी कुछ मिले और हर एक ने अपने सवाल का व्यावहारिक जवाब (मदद के रूप में) पाया।

हज़रत हाफ़िज़ अहमद उल्लाह साहब नागपुरी रज़ी. कहते हैं कि एक दिन हुज़ूर गोल कमरे में बैठे हुए थे। लगभग 20 या 25 लोग वहां मौजूद थे। हुज़ूर कुछ उपदेश दे रहे थे कि एक फ़क़ीर आया और ज़ोर से आवाज़ लगाई। वे कहते हैं कि मुझे बहुत बुरा लगा कि यह हुज़ूर की आवाज़ में बाधा डाल रहा है। मैंने दरवाज़ा बंद कर दिया। आपने अपनी बात रोक कर मुझसे कहा: "अंदर दरवाज़े पर दस्तक दो और इस मांगने वाले को अंदर से कुछ दिलवाओ।" और फ़रमाया कि ऐसा करना अच्छा नहीं है कि मांगने वाले के सवाल पर तुम दरवाज़ा बंद कर दो।

शेख याकूब अली इर्फ़ानी साहब राज़ी. लिखते हैं कि मैं 1892 से क़ादियान आता था और 1898 से स्थायी रूप से हज़रत की सेवा में आ गया। मेरे सामने अक्सर लोगों ने आप अलै. से मांगा। मैंने हज़रत मसीह मौऊद अलैहिस्सलाम को कभी नहीं देखा कि आपने किसी मांगने वाले को तांबे का सिक्का यानी पैसा दिया हो। आप हमेशा चांदी का सिक्का देते थे, यानी ज़्यादा पैसे देते थे।

एक फ़क़ीर ने एक बार हज़रत साहब के पास एकांत में आकर कहा कि मैं जंगल में एक कुआं लगवाना चाहता हूं, वहां यात्रियों को आराम मिलेगा और वे पानी पिएंगे। हज़रत साहब ने उसे इस काम के लिए 200 रुपये दे दिए कि "चूंकि तुम लोगों की सेवा के लिए यह काम कर रहे हो, इसलिए मैं पैसे देता हूं।" इस प्रकार जनसेवा का न केवल आदेश दिया, बल्कि ख़ुद एक अमली नमूना बनकर दिखाया।

हज़रत अब्दुल समी साहब रज़ी. बयान करते हैं कि मियां शरीफ़ अहमद साहब का अक़ीक़ा (बाल मुंडन) था और मेहमानख़ाने में सभी मेहमान खाना खा रहे थे कि एक फ़क़ीर मेहमानख़ाने के अंदर मांगने के लिए आ गया। लोग उसे बाहर निकालने लगे तो हुज़ूर ने फ़क़ीर को स्वयं खाना पकड़ाया और लोगों को फ़क़ीर को झिड़कने से मना किया कि "वह खाना खाने आया है, उसे झिड़कना नहीं।"

हज़रत मुंशी ज़फ़र अहमद साहब रज़ी. बयान करते हैं कि एक बार एक मौलवी क़ादियान आया और हुज़ूर अलै. से बहस करने लगा। ईसा अलैहिस्सलाम की मृत्यु और जीवन पर चर्चा थी। हुज़ूर ने उसे जवाब देना शुरू किया तो वह शांत हो गया। आपने जब उसे समझाया और पूछा कि समझ गए हो, तो उसने अत्यंत बदज़ुबानी का प्रदर्शन करते हुए कहा: "मैं समझ गया हूं कि आप दज्जाळ हैं (नऊज़ुबिल्लाह), क्योंकि दज्जाळ का गुण है कि वह बहस में दूसरों को निरुत्तर कर देता है।" आपने आगे कुछ नहीं फ़रमाया और वह चला गया। अमृतसर जाकर उसने एक पर्चा छपवाया और यह घटना बयान करके कहा कि "जब आप अंदर तशरीफ़ ले गए तो मैंने एक चिट्ठी भेजी कि मैं ज़रूरतमंद हूं और मेरे साथ कुछ आर्थिक मदद करें। आपने तुरंत 15 रुपये भेज दिए। आप बहुत सख़ी (उदार) हैं।"

हज़रत क़ाज़ी अब्दुल ग़फ़ूर साहब रज़ी. बयान करते हैं कि 1906 में मैं अपने बड़े भाई के साथ रावलपिंडी से क़ादियान गया। हुज़ूर मस्जिद की सीढ़ियों से उतर रहे थे। एक व्यक्ति हकीम शाह नवाज़ ने हुज़ूर को एक थैली में 17 पाउंड नज़राने (भेंट) के रूप में दिए। हुज़ूर ने थैली लेकर जेब में डाल ली। नीचे एक मांगने वाला खड़ा था, उसने मांग कर दी। हुज़ूर ने वही थैली जेब से निकाल कर उसके हाथ में रख दी। हकीम साहब ने निवेदन किया कि हुज़ूर! इसमें 17 पाउंड थे। फ़रमाया: "यह उसी के थे, उसी तक पहुंच गए।" यह उस ज़माने में बहुत बड़ी रक़म थी।

हज़रत उम्मुल मोमिनीन रज़ियल्लाहु अन्हा से हज़रत मिर्ज़ा बशीर अहमद साहब रज़ी. ने यह रिवायत बयान की है। लिखते हैं कि मुझसे वालिदा साहिबा ने बयान किया कि हज़रत साहब बहुत सदक़ा (दान) दिया करते थे और आमतौर पर ऐसा गुप्त देते थे कि हमें भी पता नहीं चलता था। मैंने पूछा कि कितना सदक़ा दिया करते थे? तो वालिदा साहिबा ने फ़रमाया कि बहुत दिया करते थे और अंतिम दिनों में जितना भी रुपया आता था, उसका दसवां हिस्सा सदक़े के लिए अलग कर लेते थे।

इससे यह मतलब नहीं है कि दसवें हिस्से से ज़्यादा नहीं देते थे, बल्कि कई बार घरेलू ख़र्च ज़रूरत से ज़्यादा हो जाते थे और दान में कोई कमी न आ जाए, इसलिए पहले ही कम से कम दसवां हिस्सा अलग कर लेते थे ताकि वह रुपया किसी और काम में इस्तेमाल न हो जाए। सदक़ा देने में वह अहमदी और ग़ैर-अहमदी का कोई भेदभाव नहीं रखते थे। आपकी आदत थी कि मांगने वाले को कभी मना नहीं करते थे। यह भी आपके स्वभाव में था कि आप ज़रूरत की बारीक से बारीक स्थिति को भी बहुत अच्छे से समझते थे।

एक बार किसी व्यक्ति ने आपको एक सुंदर टोपी भेजी। जब यह पार्सल हज़रत की सेवा में पहुंचा तो वहां संयोग से एक हिंदू भी मौजूद था। आपने पार्सल खोला तो टोपी निकली। उस हिंदू ने उसकी बहुत प्रशंसा की। आपने वह टोपी उसी समय उसे दे दी।

एक अहमदी सरफ़राज़ ख़ान ने बयान किया कि हम जलसे पर आए और हुज़ूर को किसी ने एक घोड़ी उपहार में दी। तो मेरे दिल में आया कि यह घोड़ी मुझे मिल जाए और मैं इसे लेकर घर जाऊं और कहूं कि मैं मसीह की घोड़ी लेकर आया हूं। जलसे के बाद मैंने निवेदन किया कि हुज़ूर! मैं वापस जाना चाहता हूं। फ़रमाया: "ठहरो।" कुछ दिनों बाद मैंने फिर ऐसा ही कहा तो हुज़ूर ने फ़रमाया: "चौधरी साहब! यह घोड़ी ले जाओ।" मैंने पूछा कि हुज़ूर! इस घोड़ी की क़ीमत क्या है? आपने फ़रमाया: "इसे घास और दाना डालो और इस पर सवारी करो, इसकी यही क़ीमत है।"

अंत में हुज़ूर-ए-अनवर ने फ़रमाया: अल्लाह तआला हमें भी इन उच्च नैतिक गुणों को अपनाने की तौफ़ीक़ दे, जिनके पैदा करने के लिए अल्लाह तआला ने आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ग़ुलामी (अनुकरण) में आप अलै. को भेजा था।

اَلْحَمْدُ لِلّٰہِ نَحْمَدُہٗ وَنَسْتَعِیْنُہٗ وَنَسْتَغْفِرُہٗ وَنُؤْمِنُ بِہٖ وَنَتَوَکَّلُ عَلَیْہِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰہِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَیِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ یَّھْدِہِ اللّٰہُ فَلَا مُضِلَّ لَہٗ وَمَنْ یُّضْلِلْہُ فَلَا ھَادِیَ لَہٗ وَاَشْھَدُ اَنْ لَّا اِلٰہَ اِلَّا اللّٰہُ وَحْدَہٗ لَا شَرِیْکَ لَہٗ وَاَشْھَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُہٗ وَرَسُوْلُہٗ، عِبَادَ اللّٰہِ رَحِمَکُمُ اللّٰہُ اِنَّ اللّٰہَ یَاْمُرُ بِالْعَدْلِ وَالْاِحْسَانِ وَاِیْتَآءِ ذِی الْقُرْبٰی وَیَنْھٰی عَنِ الْفَحْشَآءِ وَالْمُنْکَرِ وَالْبَغْیِ یَعِظُکُمْ لَعَلَّکُمْ تَذَکَّرُوْنَ فَاذْکُرُوا اللّٰہَ یَذْکُرْکُمْ وَادْعُوْہُ یَسْتَجِبْ لَکُمْ وَلَذِکْرُ اللّٰہِ اَکْبَرُ ۔

हिन्दी अनुवाद को अधिक सुगम सौम्य एवं सुन्दर बनाने हेतु सुझाव का स्वागत है,सम्पर्क अनुवादक-9781831652

टोल फ्री नम्बर अहमदिय्या मुस्लिम जमात,पंजाब - 18001032131